International Journal of Applied Research 2018; 4(3): 591-595

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2018; 4(3): 591-595
www.allresearchjournal.com
Received: 07-02-2018
Accepted: 14-03-2018

डॉ० विजय कुमार
हिन्दी-विभाग, ल०ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

Correspondence
डॉ० विजय कुमार
हिन्दी-विभाग, ल०ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा हिन्दी-विभाग, ल०ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

'एक कंठ विषपायी' में युग-बोध

डॉ० विजय कुमार

शोध-सारांश
दक्ष-यज्ञ विध्वंश की पौराणिक कथा पर आधारित दुष्यन्त कुमार का काव्य नाटक 'एक कंठ विषपायी' युग चेतना और मूल्य विमर्श की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रचना है। पौराणिक रचना में आधुनिक अर्थ भरने का यह प्रयास दुष्यन्त कुमार को युगचेतस् साहित्यकार सिद्ध करता है। कोई भी रचना अपने युगीन परिवेश से कटकर सफल, प्रासंगिक और उपयोगी नहीं हो सकी है। दक्ष-यज्ञ विध्वंश की घटना के पीछे शिव और सती का प्रेम विवाह है। इस प्रेम विवाह से कुपित हो, बदले की भावना से राजा दक्ष यज्ञ का आयोजन करते हैं। वे सभी देवताओं को तो आमंत्रित करते हैं परन्तु शिव को नहीं। सती से पति का अपमान सहा नहीं जाता है और वह यज्ञ-अग्नि में कूद आत्मदाह कर लेती हैं। फिर क्रुद्ध शिव और उनके गण दक्ष-यज्ञ का विध्वंश कर देते हैं। जब सती की सुधि आती है तब शिव सती के जले शव को कंधे पर रख जहाँ-तहाँ भटकते हैं। देवताओं के लिए यह काम चुनौती भरा होता है कि सती के शव को उनसे अलग कैसे किया जाय? भगवान विष्णु की बुद्धिमानी काम आती है। वे अपने सुदर्शन चक्र से शव के टुकड़े-टुकडे कर देते हैं। इसी कथा की तीन घटनाओं– शिव-सती के प्रेम विवाह का विरोध, दक्ष द्वारा यज्ञ के बहाने युद्ध का आयोजन तथा शिव द्वारा सती के शव को कंधे पर ढोना– को आधुनिक तथा युगीन संदर्भ से जोड़ा गया है। भारत में विवाह एक संस्था है जिसे सामाजिक मान्यता प्राप्त है। इस संस्था के कुछ आचार हैं जिसका उल्लंघन सामाजिक अपराध की श्रेणी में आता है। माता-पिता की स्वीकृति आवश्यक है, जाति-बंधन उसकी सीमा है। आधुनिक युग में जाति बंधन टूटने लगा तो परम्परावादी इसे स्वीकार नहीं कर पाये। राजा दक्ष उसी परम्परावादी की पक्षधरता करते हैं। कवि आधुनिक हैं और विवाह में स्वतंत्र चयन के पक्षधर हैं। मानव जाति के लिए युद्ध बड़ी समस्या रही है। आदमी विचारों से आधुनिक तो हुआ पर उसके मन से युद्ध का भूत नहीं निकला। दुनिया ने दो-दो विश्व युद्धों को देखा है। भारत किसी-न-किसी रूप में इन युद्धों से प्रभावित हुआ है। चीनी आक्रमण (1962) ने तो हमें झकझोर कर रख दिया। हमारे नेता उस समय युद्ध से हिचक रहे थे। कवि ने अपनी इस रचना 'एक कंठ विषपायी' में ब्रह्मा-विष्णु आदि देवताओं के माध्यम से उसी हिचक को प्रकट किया है। यह भी संदेश दिया गया है कि युद्ध किसी समस्या का अन्तिम हल नहीं है। अत: विवेक से काम लेना चाहिए जैसा कि भगवान विष्णु ने शिव के साथ होने वाले संभावित युद्ध के समय विवेक से काम लिया था।परम्परावादी अज्ञान या मोहवश मृतप्राय परम्परा, रीति-रिवाजों से जुड़े रह जाते हैं; ठीक शिव की तरह जो मोहवश सती के शव को ढोते रह जाते हैं। कवि ने इस प्रसंग द्वारा स्वातंत्र्योत्तर भारत के सामाजिक, राजनैतिक तथा साहित्यिक क्षेत्र में नये मूल्यों के आग्रह को उजागर किया है।

कूटशब्द: युग-बोध, भारत के सामाजिक, राजनैतिक तथा साहित्यिक क्षेत्र, एक कंठ विषपायी

आलेख
स्वातंत्र्योत्तर भारत की सामाजिक-सांस्कृतिक, राजनैतिक तथा साहित्यिक चेतना की अभिव्यक्ति

एवं मूल्य विमर्श की दृष्टि से दुष्यन्त कुमार का 'एक कंठ विषपायी' काव्यनाटक हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस कृति के साथ यदि किसी काव्य नाटक की चर्चा की जाती है तो वह है डॉ धर्मवीर भारती का 'अंधायुग'। दोनों कृतियों का आधार पौराणिक है जिसे युगीन संदर्गों से जोड़कर कथा को प्रासंगिकता तथा सार्थकता प्रदान की गयी है। 'अंधायुग' महाभारत के अठारहवें दिन के युद्ध पर आधारित है जबकि 'एक कंठ विषपायी' 'शिवपुराण' के दक्ष-यज्ञ विध्वंस पर।

कोई भी साहित्यिक रचना अपने युगीन संदर्भों से कटकर अपनी सार्थकता सिद्ध नहीं कर सकती है। इस दृष्टि से हमारा आधुनिक साहित्य बड़ा ही जीवन्त है। राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम के दौरान हमारे नायकों ने जिस मूल्य आधारित आन्दोलन का नेतृत्व किया वह न केवल भारतीय संस्कृति अपितु मानव संस्कृति के विकास का मार्ग प्रशस्त करता है। हमने इस आन्दोलन के क्रम में त्याग, अहिंसा सत्याग्रह आदि मानवीय प्रतिमानों को स्थापित किया जिसके बिना स्वाधीनता संग्राम उद्देश्य विहीन और दिशा-विहीन हो जाता। क्योंकि संकट केवल राजनीतिक पराधीनता या आर्थिक शोषण का नहीं था अपितु मूल्यों के संकट का भी था। ऐसा ही संकट मध्यकाल (भक्तिकाल) में भी था। भक्तिकाल की सभी धाराएँ एक दूसरे से टकराती अवश्य थी परन्तु उन सबसे होकर मानवीय चिन्तन की धारा विकासमान थी। भक्ति साहित्य इसीलिए आज भी प्रासंगिक है। परन्तु ऐसा क्या हुआ कि राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान स्थापित मूल्य तथा आदर्श की भीत आज़ादी के तुरंत बाद धारासायी हो गयी और उसकी धमक से साहित्य के क्षेत्र में विक्षोभ पैदा हो गया। प्रयोगवादी तथा नये कवियों ने क्यों परम्परा और राष्ट्रीय आन्दोलन के क्रम में उपजे मूल्यों के प्रति अनास्था प्रकट की, उससे मुक्ति की छटपटाहट व्यक्त की। इसी छटपटाहट के लिए 'एक कंठ विषपायी' समकालीन साहित्य में स्थान बना पाया जिसमें राजा दक्ष एक मृतप्राय सामाजिक परम्परा के टूट जाने पर शिव के साथ युद्ध को आमंत्रित करते हैं और शिव भी मोहवश यथार्थ को स्वीकार करने में असमर्थ होते हैं। इस काव्य नाटिका के आभार में दुष्यन्त कुमार ने लिखा है कि "जर्जर रूढ़ियों और परम्परा के शव से चिपटे हुए लोगों के संदर्भ में प्रतीकात्मक रूप से आधुनिक पृष्ठभूमि और नये मूल्यों को संकेतित करने के लिए इस कथा में पर्याप्त सामर्थ्य है तथा इस पर एक खण्डकाव्य लिखा जा सकता है।" शिव सती के शव के रूप में मृतप्राय परम्परा और मूल्य को ढो रहे हैं और इसीलिए वरुण देवता कहते हैं–

"क्या मोह ज्ञान को इतना अंधा कर देता है
जो कि मृत्यु को भी हम सत्य नहीं कहते हैं।
परिवर्तन पर होते
विक्षुब्ध हृदय में,
सुन्दर और सनातन कहकर
शव से ही चिपके रहते हैं।"[1]

इसी तथ्य को और स्पष्ट करते हुए कुबेर कहते हैं–

"शायद ऐसा ही होता है
इसीलिए संभवतः जग में
जब परम्परा का खण्डन कर
कोई नया मूल्य उठता है–
लोग उसे मिथ्या कहते हैं।
और जहां तक, जबतक संभव हो पाता है,
मृत परम्परा के शव से चिपके रहते हैं।"[2]

इसी मृत परम्परा के प्रति अनास्था का भाव 'अंधायुग' में अधिक नाटकीय रूप में प्रकट हुआ है जहाँ युयुत्सु महाभारत युद्ध की अनैतिकतापूर्ण वार-प्रहार तथा युद्धोपरान्त मानव भविष्य की शून्यता को देखते हुए श्री कृष्ण को प्रभु मानने से इंकार कर देता है।

वस्तुतः युयुत्स की अनास्था द्वापर की नहीं है, हमारे स्वातंत्र्योत्तर युग की है जिसमें प्रभु वर्ग (शासक वर्ग) की प्रभुता संशय के घेरे में आ चुकी थी–

"आस्था नामक यह घिसा हुआ सिक्का
अब मिला अश्वत्थामा को
जिसे नकली और खोटा समझ मैं
कूड़े पर फेक चुका हूँ वर्षों पहले।"[3]

'अंधायुग' और 'एक कंठ विषपायी' में व्यक्त अनास्था और विद्रोह उस परम्परा के प्रति है जो नई परिस्थिति में निर्जीव हो चुकी है और आधुनिकता विरोधी लगती हैं। वे परम्पराएँ सामाजिक तथा राजनीतिक के साथ-साथ साहित्यिक भी है जो नये मूल्यों से जुड़ने से कतराती है और जन साधारण की भूमिका को नकारती है, यथार्थ से आँखें चुराती है। इस

परम्परा और मूल्य संक्रमण का ऐतिहासिक सर्वेक्षण करते हुए डॉ धर्मवीर भारती चौकानेवाला परन्तु तथ्यपूर्ण खुलासे करते हैं और सारी विकृति की जड़ सत्याग्रह युग में खोज निकालते हैं। डॉ० भारती के अनुसार सत्याग्रह से ही नायक-पूजा की प्रवृति उभरती चली गयी और साधारण को सोचने और अपना मूल्य विकसित करने का अवसर नहीं मिला। बकौल धर्मवीर भारती

> "जो कुछ भी संग्राम में श्रेयस्कर हो वह उचित है चाहे वह कितना ही असंगतिपूर्ण, अन्तर्विरोधपूर्ण क्यों न हो। परिणाम यह होता था कि एक ओर हम खिलाफत के आन्दोलन में भी साथ देते थे ओर दूसरी और विलायत जाते हुए गंगाजल भी साथ ले जाते थे। एक ओर अहिंसा को अपनी राष्ट्रीय परम्परा और संसार को भारत की अमूल्य देन भी मानते थे और दूसरी ओर नेताजी द्वारा आयोजित विराट आजाद हिन्द फौज पर भी गर्व से फुल उठते थे यद्यपि उसका सारा आधार हिंसा पर था।"[4]

मूल्यों में अन्तर्विरोध केवल राजनीतिक या सामाजिक क्षेत्र में ही नहीं था बल्कि मूल्यों का संघर्ष साहित्यिक क्षेत्र में भी मुखर था। 'एक कंठ विषपायी' में इन्द्र देव केवल मान्यताओं की नहीं, विचारों और भावों की भी बात करते हैं–

"प्रभु,
क्यों लोग 'नये' को ऊपर
आने देना नहीं चाहते?
चाहे वे साधारण जन हों
अथवा महादेव शंकर हों
क्यों इनमें अधिकांश लोग लाशें ढोते हैं;
लाशें मरी मान्यताओं की
मरे विचारों की
भावों की....।"[5]

परम्परा और मूल्य संकट को लेकर जो धारा संगठित होकर सामने आयी वह कविता की धारा थी– प्रयोगवाद और नयी कविता की धारा। इस धारा के कवियों ने कविता और अपने वक्तव्य के माध्यम से परम्परा और पुराने प्रतिमानों का विरोध करते हुए नये मूल्यों तथा प्रतिमानों की प्रतिष्ठा की। इसमें पाश्चात्य दर्शन तथा मनोविज्ञान के खुलासे भी प्रेरित कर रहे थे। परन्तु दुष्यन्त कुमार ऐसे कवि थे जो 'सप्तक' कवियों में शामिल नहीं थे और उनका दृष्टिकोण यथार्थपूर्ण और जनवादी था। बकौल डॉ गणपति चन्द्र गुप्त– "इसमें संदेह नहीं कि दुष्यन्त कुमार धरती के यथार्थ से पूरी तरह जुड़े हुए व्यापक चेतना के कवि थे- इसीलिए उनकी रचनाओं में दमित वासनाओं और कुंठाओं के स्थान पर समकालीन जीवन की विषमता का अंकन पूरी सहृदयता से हुआ है।"[6] 'एक कंठ विषपायी' की विशेष रूप से प्रशंसा करते हुए उन्होंने लिखा है कि– "मुक्तक कविताओं के अतिरिक्त उनका एक काव्य नाटक 'एक कंठ विषपायी' प्रकाशित हुआ जिसमें शिव के विषपान की पौराणिक कथा के माध्यम से व्यापक हित के निमित्त एक व्यक्ति के द्वारा समस्त पीड़ाओं के हलाहल को पी लेने का संदेश दिया गया है।"[7] शिव कहते भी हैं–

"हर परम्परा के मरने का विष,
मुझे मिला
हर सूत्रपात का
श्रेय ले गये और लोग।"[8]

शिव ने दक्षकन्या सती से प्रेम विवाह कर सामाजिक परम्परा को तोड़ा और कुपित होकर दक्ष ने युद्ध की पृष्ठभूमि तैयार कर ली। दक्ष की आक्रामकता वैवाहिक संस्था के टूटने के कारण उत्पन्न हुई थी और इसी को आधार बना भगवान विष्णु के माध्यम से दुष्यन्त कुमार कहते हैं कि परम्परा के पोषक परम्परा के टूटने पर सहसा डर जाता है या आक्रामक-हिंसक हो उठता है–

"हर परम्परा के मरने पर थोड़े दिन तक
सारा वातावरण शून्य से भर जाता है
औ' परम्परा के चरणों में नतमस्तक
उसका हर पोषक
सहसा मन में डर जाता है।
अथवा आक्रामक या हिंसक हो उठता है।"[9]

आधुनिक युग की चिंतनधारा को पश्चिमी वादों ने अत्यधिक प्रभावित किया है। आर्थिक क्षेत्र में मार्क्सवाद, मनोविज्ञान के क्षेत्र में फ्रायडवाद तथा दर्शन के क्षेत्र में अस्तित्ववाद ने हमारे साहित्य को बहुत प्रभावित किया है। परन्तु इस प्रभाव को स्वीकार करने में परम्परावादी साहित्यकारों – आलोचकों को समय लगा। इसीलिए ब्रह्मा जी कहते हैं–

"जब परम्परा का खंडन कर
कोई नया मूल्य उठता है–
लोग उसे मिथ्या कहते हैं।

× × × ×
मृत परम्परा के शव से चिपके रहते हैं।
पूजा के घड़ियाल बजाते।
भाव-लहरियों में बहते हैं।"[10]

आधुनिक युग की चिन्तनधारा और मूल्य विमर्श को दो विश्वयुद्धों, तदुपरान्त शीत युद्ध ने भी प्रभावित किया है। 'अंधायुग' में महाभारत के साथ-साथ द्वितीय विश्वयुद्ध से उत्पन्न विकृति का प्रभाव दिखता है। परन्तु 'एक कंठ विषपायी' में युद्ध और शांति की जो समस्या है वह चीनी आक्रमण (1962) से उत्पन्न हुई है। हमारे नेताओं ने चीनी आक्रमण को युद्ध में बदलने की अपेक्षा उसे टालने के में भलाई समझी। 'एक कंठ विषपायी' में इस बात को स्वीकार किया गया है कि युद्ध किसी समस्या का समाधान नहीं है–

"युद्ध.....
अधिक से अधिक विशिष्ट परिस्थितियों में
समाधान का संभव कारण बन सकता है
यही नियम है।
लेकिन कोई शासक मन में
स्वयं युद्ध को
किसी समस्या का किंचित् भी
समाधान समझे तो भ्रम है।"[11]

दक्ष यश विध्वंश के उपरान्त जो युद्ध की स्थिति बनी उसमें केवल आग्रह था, कोई जीवन दृष्टि नहीं थी। प्राण की आहुति की सार्थकता केवल युद्ध तक सीमित नहीं की जा सकती है, उसकी सार्थकता तो सत्य की रक्षा में है किन्तु दक्ष ने मरणासन्न लौकिक परम्परा को जीवित रखने के लिए ही युद्ध का आयोजन कर लिया था। देश में बढ़ती बेरोजगारी, आर्थिक तंगी तथा अव्यवस्था की ओर से जनता का ध्यान भटकाने के उद्देश्य से भी युद्ध का वातावरण तैयार किया जाता है। सत्ता के इस दूषित चरित्र का उद्घाटन भी इस काव्य-नाटक में हुआ है–

"नये सत्य को सम्मुख पड़कर नहीं देखते
वे भी सहसा नए प्रश्न से नहीं जूझते
उससे लड़कर नहीं देखते
सिर्फ व्यस्तताओं की रचना करके
उसे टाल जाते हैं
और युद्ध भी एक व्यस्तता का नाटक हैं।"[12]

और युद्ध का परिणाम राजा या शासक को कम, जन साधारण, प्रजा को अधिक भोगना पड़ता है। 'एक कंठ विषपायी' में राजा दक्ष का भृत्य सर्वहत उसी साधारण जन का प्रतिनिधित्व करता है। युद्ध में प्रजा की विवशता को प्रकट करते हुए सर्वहत कहता है–

"अरे प्रजा हम थे
हमने उफ तलक नहीं की
शासन के गलत-सलत झोंकों के आगे भी
फसलों-से विनयी हम विछे रहे निर्विवाद
× × ×
हमने पथ दिया सबको
क्योंकि हम प्रजा थे।"[13]

सर्वहत भूख से पीड़ित है और रोटी न मिलने पर खून पीने तक को तैयार है। यह बताता है कि युद्ध से जर्जर देश में कैसी-कैसी विकृतियाँ उत्पन्न हो सकती है। 'अंधायुग' में धर्मवीर भारती इसे कलियुग की विकृति कहते हैं जिसमें कोई आत्मघाती है, कोई निष्क्रिय है, तो कोई विगलित है। युद्ध के उपरान्त भय और आशंका का बाजार गर्म रहता है। 'एक कंठ विषपायी' में भी ऐसी स्थिति उत्पन्न हो चुकी है। विष्णु वरुण देव से कहते हैं–

"नहीं वरुण
यह तो युद्धोपरान्त उग आयी
संस्कृति के ह्रासमान मूल्यों का
एक स्तूप है- भग्नप्राय
पथ हारा
हिंसा नहीं है इसमें
भय हैं... आशंका है।"[14]

'एक कंठ विषपायी' का आधार पौराणिक अवश्य है परन्तु कथा विकास के क्रम में समकालीन भारत की सामाजिक-सांस्कृतिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक विमर्श मुखर हो उठता है। जनता के कवि होने के नाते दुष्यन्त कुमार ने इस काव्य नाटक में भी जनपक्षधरता दिखाते हुए सर्वहत के हितों का पोषण किया है। सर्वहत उस सर्वहारा वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है जिसे केवल सुनने का अधिकार है कुछ बोलने का नहीं। डॉ० सन्तोष कुमार चतुर्वेदी ने इस काव्य नाटिका के संपादकीय में ठीक ही लिखा है, "क्या यह शिव उस आम आदमी की शक्ति का पर्याय नहीं जिसके जगने पर सत्ताधीशों

को ज़मीदोज होते देर नहीं लगती। ये सत्ताधीश अपनी भलाई इसी में समझते हैं कि शिव अपना नेत्र बंद रखे। अर्थात् जनता अपनी शक्ति, अपने सामर्थ्य को भूली रहे– यह शिव जो कि एक जन प्रतीक है, दुनिया भर के विष को अपने कंठ में समाहित किये हुए है"[15] उसकी सबसे बड़ी समस्या भूख है और युद्ध की स्थिति में वह सबसे अधिक पीड़ित होता है। सत्ता का अहंकारी युद्ध चाहता है सर्वहारा नहीं। यह अहंकार आज भी शक्तिशाली शासकों के सिर चढ़कर बोल रहा है और विश्व की जनता परमाणु यद्ध से आतंकित रहती है। इसीलिए 'एक कंठ विषपायी' का विमर्श आज प्रासंगिक हो गया है।

संदर्भ सूची

1. एक कंठ विषपायी; डॉ० दुष्यन्त कुमार, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण- 2013, पृष्ठ– 86, ISBN : 978-81-8031-793-4 (दृश्य-तीन)
2. वही, पृष्ठ- 86-87 (दृश्य-तीन)
3. अंधायुग; डॉ० धर्मवीर भारती, किताब महल, इलाहाबाद, संस्करण- 2011, पृष्ठ–102
4. मानव मूल्य और साहित्य; डॉ० धर्मवीर भारती, भारतीय ज्ञानपीठ, पृष्ठ–59-60
5. एक कंठ विषपायी; पृष्ठ–123-124
6. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास; डॉ० गणपति चन्द्र गुप्त, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण– 2007, पृष्ठ–189
7. वही; पृष्ठ
8. एक कंठ विषपायी; पृष्ठ–79 (दृश्य-तीन)
9. वही; पृष्ठ–122 (दृश्य-चार)
10. वही; पृष्ठ–87 (दृश्य-तीन)
11. वही, पृष्ठ–103 (दृश्य-चार)
12. वही, पृष्ठ–125 (दृश्य-चार)
13. वही, पृष्ठ–113 (दृश्य-चार)
14. वही, पृष्ठ–53 (दृश्य-दो)
15. वही, पृष्ठ–129